ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
ISSN No.: 2347-2944, RNI TITLED No. :UPBIL04292,
RNI REG. No.: UPBIL/2014/66218, SOCI.REG. No.: 561/2013-14 Vol.-5, No.-II, PP-297-300,YEAR- DEC.2016

डॉ0 बी0आर0 अम्बेडकर के विचारों की सार्थकता

❑ डॉ0 गौरीशंकर द्विवेदी

हम समय के एक दौर में जी रहे है। ऐसा दौर जिसमें पुराने मूल्य गिर रहे है। नये मूल्य बनने की प्रक्रिया में है। ऐसे में हमें डॉ0 बी0आर0 अम्बेडकर याद आते है। उनका व्यक्तित्व अत्यन्त संश्लिाण्ट था। इसलिए उसका विश्लेषण उनके दौर और उनके अनुभवों की ही रौशनी में किया जा सकता है। दोनों ही स्थितियाँ कठिन और कड़वी थीं। राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय मामलों पर डॉ. आंबेडकर के विचार, उनकी पारिवारिक पृष्ठभूमि, शिक्षा और व्यक्तित्व के विकास के ही आइने में बने। डॉ. आंबेडकर के मन में गहरी तल्खी थी। वह उसी तल्खी के साथ जीते भी रहे, और उसी तल्खी के साथ मर गये। वह विद्रोही थे, अवज्ञाकारी।

डॉ. आंबेडकर द्वारा हिंदू जाति व्यवस्था की निंदा, छुआछूत की प्रथा को लेकर उनकी चिढ़ या नफरत, दलितों को समाज की मुख्यधारा में लाने की उनकी वकालत और समाज के वंचित, प्रताड़ित लोगों की दुखदायी स्थिति को लेकर उनकी पीड़ा और क्रोध, इन सभी का कड़वा अनुभव उन्होंने अपने व्यक्तिगत जीवन में किया था। अपनी जिंदगी में उन्होंने ज्यादातर अनादर और अपमान झेला। इसीलिए हिंदू सामाजिक व्यवस्था को लेकर उनके मन में अत्यंत निंदा का भाव रहा। आज जरूरत है भारतीय समाज और राज्यतंत्र से जुड़े अनेक मसलों को डॉ. आंबडेकर की उसी वैचारिक पृष्ठभूमि में समझने की।

यह सही है कि गाँधी और आंबेडकर दोनों ही जाति व्यवस्था की बुराइयों और दलितों पर हो रहे सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक अन्याय के विरुद्ध थे। लेकिन दोनों के नजरिये में काफी अंतर था। दोनों की चिंता समान थी। मगर बावजूद इसके छुआछूत की प्रथा को खत्म करने और दलितों को मानवीय गरिमा और इज्जत दिलाने के तौर–तरीकों को लेकर दोनों में मतभेद थे। दोनों ही मूलतः लोकतांत्रिक भावना के हिमायती थे। दोनों ही दलितों और पिछड़े वर्गों के लोगों के उत्थान के लिए पूरी तरह समर्पित रहे। लेकिन हिंदू समाज में दलितों की स्थिति को ठीक करने और उनसे जुड़े तमाम मसलों के समाधान की विधि को लेकर दोनों का नजरिया एकदम अलग–अलग रहा। दोनों ने सामाजिक परिवर्तन की वकालत की। लेकिन इच्छित सामाजिक परिवर्तन लाने के दोनों के तौर–तरीकों और साधनों में भिन्नता थी। एक तरफ गाँधी ने सामाजिक परिवर्तन के लिए आदर्शवाद का रास्ता अपनाया, जब कि दूसरी तरफ आंबेडकर अपने नजरिये में अधिक व्यावहारिक तरीके से परिवर्तन लाना चाहते थे। गाँधी ने तथाकथित दलितों को हिंदू समाज में स्वीकृति दिलाने के लिए हिंदुओं के दिल और दिमाग में बदलाव लाने पर बल दिया। लेकिन आंबेडकर परिवर्तन के इस नजरिए से सहमत नहीं थे। उन्होंने दलितों को समाज की मुख्यधारा में लाने के लिए अधिक व्यावहारिक तरीके की बात कही। उनका ख्याल था कि गाँधी जी के तरीके पर चलते हुए नतीजे सामने आने में सदियाँ गुजर जायेंगी। वह यह मानते थे कि केवल उपदेश देने से सामाजिक भेदभाव की बहुत गहराई तक पहुँच चुकी वास्तविकता बदल नहीं पायेगी। इसीलिए वह समाधान को लेकर अधिक व्यावहारिक थे। उनका मानना था कि जब तक दलितों और गैरदलितों के बीच गहरा मेल–मिलाप नहीं होता, जब तक वे एक साथ बैठ कर खान–पान नहीं करते, जब तक उनके बीच वैवाहिक संबंध भी नहीं बनते और जब तक सामाजिक स्तर पर समता और समानता का व्यवहार नहीं होता स्थितियाँ बदल

❑ एसोसिएट प्रोफेसर सह अध्यक्ष, समाज शास्त्र अमरनाथ मिश्र, पी0जी0 कालेज, दुबे छपरा, बलिया (उ0प्र0) भारत

नहीं पायेंगी। आंबेडकर तो एक कदम और आगे बढ़ गये। उन्होंने दलितों की मुक्ति के लिए एक त्रिमुखी योजना सामने रखी। उन्होंने कहा कि सब से पहले दलित शिक्षित हों। फिर वे अपने को संगठित करें और उसके बाद ही समाज में अपने लिए इज्जत और अधिकार की लड़ाई शुरू करें। अपने विभिन्न लेखों और भाषणों में उन्होंने इस व्यूह रचना के बारीक पक्षों–बिंदुओं को सामने रखा। उन्होंने जाति प्रथा नाम के संस्थान पर जबरदस्त हमला किया और उसे समूल नष्ट करने की बात कही। उनकी दलील थी कि दलितों से भेदभाव बरतने और उनका दमन करने का मुख्य कारण जाति व्यवस्था ही है।

गाँधी और डॉ. आंबेडकर के बीच जो भिन्नता थी, वह अवधारणा को लेकर थी। गाँधी की विश्वदृष्टि की जड़ें नैतिकता में थीं। उनके लिए स्वराज अंग्रेजी शासन से मुक्ति से कहीं अधिक आगे था। उनके लिए वास्तविक भारतीय होना और अंग्रेजी तौर–तरीकों का परित्याग एक राष्ट्रीय और व्यक्तिगत आत्मानुभूति थी। गाँधी जी राज्य (स्टेट) को एक राजनैतिक इकाई की जगह पर नैतिक इकाई मानते थे। डॉ. आंबेडकर के लिए सब कुछ सत्ता और राजनीति थी। राज्य एक राजनैतिक व्यवस्था था, व्यवस्थापूर्वक जीवन जीने का आश्वासन देने तथा मानव व्यवहार को नियमित करने के लिए। धर्म उनके लिए एक निजी विश्वास था, उन मानवाधिकारों के हनन के विरुद्ध जो ऊँची जातियाँ करती थीं। लगता है कि वह कहना चाहते थे : 'ब्राह्मण, ब्राह्मण हैं। अछूत–अछूत हैं। दोनों में कभी मिलाप नहीं होगा।"

मगर इसके बावजूद गाँधी और आंबेडकर के नजरिये में एक स्पष्ट अंतर और है। खासतौर पर छुआछूत की उलझी हुई समस्या को लेकर। वह उसे जाति व्यवस्था का स्वाभाविक सहभागी मानते थे। लेकिन जब हम दोनों के विचारों और विश्वासों को निजी दुराग्रहों से अलग ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में देखते हैं तब लगता है कि कहीं गहराई में दोनों में समानता भी है। गाँधी और आंबेडकर दोनों ही भेदभाव और असमानता से भरी छुआछूत के विरुद्ध थे। सारी समस्या की जड़ इसी छुआछूत में है। दोनों ही अपने समय के महान समाज सुधारक थे और दोनों समानता के नजरिये के विश्वासी थे। लेकिन आंबेडकर के लिए समानता का अर्थ वर्णों की हैसियत की समानता नहीं बल्कि सभी के लिए सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक अवसरों की समानता की उपलब्धता था। यह भी सही है कि गाँधी और आंबेडकर में कुछ अत्यंत महत्त्वपूर्ण और नाजुक मसलों पर गहरे मतभेद थे। मगर उसके बावजूद गाँधी आंबेडकर का बहुत सम्मान करते थे। गाँधी मानते थे कि आंबेडकर एक बहुपठित विद्वान उच्चकोटि के कानूनविद्, महान राजनेता और दलित वर्गों के अग्रणी पैरवीकार थे। उनकी प्रशंसा करते हुए गाँधी जी ने लिखा था : 'आंबेडकर में एक देशभक्त के पक्के–खरे गुण हैं। वह एक आधुनिक मनु हैं।

मैं इस बात पर बल देना चाहता हूँ कि हम उनके मतभेदों को अनावश्यक ढंग से न उछालें। हमें भारतीय समाज में दलित की मुक्ति संबंधी चिंताओं पर बल देना चाहिए। दोनों के बीच की समानता के मुद्दों को उठाना चाहिए। मेरा सुझाव है कि इस सेमिनार में विचार–विमर्श इस बिंदु को आगे बढ़ाने के लिए किया जाना चाहिए कि आज के संदर्भ में आंबेडकर के विचार कितने सार्थक हैं?

उन्होंने अपनी समाजशास्त्रीय अंतर्कृष्टि का इस्तेमाल करते हुए अछूतों की पहचान को एक स्वरूप देने का कठिन प्रयास किया ताकि वे अपने अस्तित्व का अहसास कराने में सक्षम हो सकें। इस प्रयास का अंतिम परिणाम उनके इस वक्तव्य में पाया जाता है : "अछूत। वे कौन थे और वे अछूत क्यों बन गये।" यहाँ पर वह पुनः पश्चिमी विद्वानों के जाति संबंधी सिद्धांत को अस्वीकार करते हैं। उन विद्वानों की दृष्टि में अछूत वे देशी (स्थानिक) लोग हुए जिन्हें आर्यों ने आक्रमण के बाद शासित बना दिया। उन्होंने जो अर्थ लगाया वह बहुत उलझा हुआ भी है और बारीक भी। उनकी व्याख्या है कि प्रत्येक समाज पर बाहरी ताकतों द्वारा हमला होता है। हर आक्रामक देशी लोगों के मुकाबले अधिक ताकतवर मालूम होता

है। पराजय के बाद एक जगह से दूसरी जगह जाना पड़ता था। इन्हीं के जरिये एक नये गुट का जन्म हुआ जिसे डॉक्टर आंबेडकर दलित या मराठी 'ब्रोकेन मेन' कहते हैं। पराजय के बाद ये जनजातियाँ स्थानबद्ध हो गईं। उन्होंने दलितों को इस रूप में तैयार किया ताकि वे गाँवों को भविष्य में आगे होने वाले हमलों से बचा सकें। इसीलिए उन्हें गाँव के छोर पर बसा दिया गया। यह कारण तो बिल्कुल नहीं था कि उन्हें गाँवों के छोर पर भगा दिया गया। उन्हें गाँवों के छोर पर इसलिए बसाया गया ताकि वे बेहतर तरीके से आक्रमणकारियों से रक्षा करने में सक्षम हों।

डॉक्टर आंबेडकर के वे ही टूटे हुए या दलित लोग बुद्ध के अनुयायी हुए और तब तक उसी स्थिति में बने रहे जब तक अन्य धर्मांतरित लोग हिन्दुत्व की मुख्यधारा में वापस नहीं आये। इसी से यह भी साफ हो जाता है कि क्यों अछूत ब्राह्मणों को आक्रमणकारी मानते हैं। क्यों उनका इस्तेमाल अपने पुरोहित के रूप में नहीं करते हैं। उन्हें अपने घरों में प्रवेश की अनुमति नहीं देते। इसी से यह भी स्पष्ट हो जाता है कि क्यों उन 'टूटे हुए' या दलित लोगों को अछूत के रूप में जाना गया। वे दलित ब्राह्मणों से घृणा करते थे। वे मानते थे कि ब्राह्मण बौद्धधर्म के शत्रु हैं। ब्राह्मणों ने ही उन दलितों पर जबरन छुआछूत इसलिए थोपा क्योंकि वे बौद्धधर्म छोड़ने वाले नहीं थे। मगर बावजूद इसके डॉक्टर आंबेडकर यह नहीं स्वीकार करते थे कि अछूतों के साथ ब्राह्मणों के गंदे व्यवहार का कारण उनका बौद्धधर्म से जुड़ाव था। आंबेडकर के लिए यह कारण संतोषजनक नहीं था। एक कारण और है और वह है यह तथ्य कि अछूतों ने शाकाहारी होने से मना कर दिया था। उन्होंने गोमांस खाना जारी रखा। जब कि दूसरी तरफ ब्राह्मणों ने गाय को एक पवित्र पशु माना। गोमाता जैसी भावना। बौद्धधर्म में उन्हें हिन्दुत्व के विरोध का सर्वाधिक व्यापक मॉडेल मिल गया।

इसीलिए डॉ. आंबेडकर ने उस जाति के लिए न केवल एक नये सिद्धांत का प्रतिपादन किया जो एक श्रेणीबद्ध असमानता की भावना से जुड़ी थी, बल्कि उसे एक ऐसी पहचान दी जो अछूतों को बंधनमुक्त करने में मददगार हो। उन्होंने उस जाति को एक प्रतिष्ठाजन्य ऐसी अलग की पहचान दी जो भारत में बौद्धधर्म को एक विषेश हैसियत के रूप में मिली हुई है। उसने अछूतों को जाति व्यवस्था में अधीनता की उनकी स्थिति पर सवाल उठाने के लिए एक मजबूत सैद्धांतिक आधार दिया। सबसे बड़ी बात यह कि उससे उन्हें एक समतावादी सिद्धांत मिल गया। एक बार अपने आपको पूर्ववर्ती बौद्ध मान लेने के बाद वे विभाजन को खत्म कर सकेंगे। जाति व्यवस्था की ऊँचनीच की स्थिति के खिलाफ लामबंद हो सकेंगे। बहरहाल डॉ. आंबेडकर को इस रास्ते पर आगे चलने में कठिनाई हुई क्योंकि काँग्रेस उसकी विरोधी थी। सबसे ऊपर गाँधी ही विरोधी थे।

आंबेडकर की सार्थकता के पहलुओं पर रोशनी डालते हुए एक महत्त्वपूर्ण और नाजुक तथ्य यह सामने आता है कि वह भारत में जाति व्यवस्था के खिलाफ सिर्फ उनके भयंकर विरोध तक सीमित नहीं है। वह उसके आगे बहुत दूर तक जाता है। भारतीय संविधान के निर्माण में उनका अग्रणी योगदान तो रहा ही–उन्हें भारत में दलित आंदोलन के अभियानी और बौद्ध धर्म को एक वैकल्पिक पुनर्गठित ताकत के प्रचारक के रूप में भी याद किया जाता है। वह सामाजिक न्याय की धारणा के स्पष्ट प्रबोधक और गरीब तथा कमजोर वर्गों को सक्षम बनाने के प्रबल हिमायती रहे। वह उन लोगों के मुक्तिदाता रहे जिन्हें समाज सदियों से अनादर और नफरत की निगाह से देखता रहा। ये ही वे महत्त्वपूर्ण मसले हैं जो आज के भारतीय समाज की सामाजिक और आर्थिक चिंताओं के संदर्भ में आंबेडकर के विचारों को सार्थक बनाते हैं। भारतीय समाज में युगों–युगों से व्याप्त जाति–व्यवस्था और छुआछूत को लेकर परंपरागत ढंग से बनी हुई दृष्टि को बदलना और कुल मिलाकर मानवता के समान अधिकारों को वापस दिलाना उनके जीवन का एकमात्र सपना था। उनका वास्तविक समाज वह समाज है जिसकी बुनियाद स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व है। स्वतंत्रता किसी भी प्रकार के

दमन से मुक्ति है। समानता सामाजिक न्याय की प्राथमिक आवश्यकता है। बंधुत्व लोकतंत्र का दूसरा नाम है।

हम सभी को यह याद रखना चाहिए कि डॉ. आंबेडकर दलितों की विभिन्न समस्याओं को लेकर गंभीर बहस शुरू करने के सिलसिले में एक दिशासूचक की भूमिका निभाते हैं। यदि वह जाति आधारित भेदभाव की समूल समाप्ति के मुद्दे पर इतने मुखर और बेबाक नहीं होते तो संवैधानिक प्रावधानों और अन्य नीतियों, कार्यक्रमों के माध्यम से आछुत की समाप्ति, दलितों के सामाजिक, शैक्षणिक, आर्थिक और राजनैतिक सशक्तिकरण सम्बन्धी स्थितियों में वह परिवर्तन नहीं आया होता जो आजादी मिलने पर आज प्राप्त है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. श्याम सिंह शशि (सम्पा) 1992 अम्बेडकर एण्ड सोश्ज्ञल जस्टिस पब्लिकेशन डिवीजन, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार।
2. धनंजय वीर 1954, अम्बेडकर लाईफ एण्ड मिशन, बम्बई।
3. के0एस0 भारती 1990, फाउण्डेशन ऑफ अम्बेडकर थॉट, नई दिल्ली।
4. अम्बेडकर बी0आर0, 1937 एनिहिलेशन ऑफ कास्ट बाम्बे थैकर एण्ड कम्पनी।
5. 1946 हु वेयर द शद्राजः हाऊ दे कम टू बी द फोम वन इन इण्डो आर्यन सोसायटी बाम्बे थैकर एण्ड कम्पनी।
6. आर0जी0 सिंह 1986: भारतीय दलितों की समस्याएं एवं उनका समाधान, भोपाल, मध्य प्रदेश, हिन्दी ग्रंथ अकादमी।